न्यायकि सक्रयिता और न्यायकि संयम

संदर्भ:

न्यायपालकिा को संवधिान के अंतर्गत एक सक्रयि भूमकिा सौंपी गई है। न्यायकि सक्रयिता और न्यायकि संयम उसी रचनात्मकता और व्यावहारकि ज्ञान के पहलू हैं।

- न्यायकि सक्रयिता की अवधारणा न्यायकि संयम के ठीक वपिरीत है। न्यायकि सक्रयिता और न्यायकि संयम ऐसे दो शब्द हैं जनिका प्रयोग कुछ न्यायकि नर्णियों के पीछे के दर्शन और अभपि्रेरणा का वर्णन करने के लयि कयिा जाता है। न्यायकि सक्रयिता नर्णिय के एक ऐसे सद्धिांत को संदर्भति करती है जो वधि िकी भावना और बदलते समय पर वचिार करती है, जबकि न्यायकि संयम वधि िकी कठोर व्याख्या और वधिकि पूर्व-दृष्टांत पर नर्भिर करता है।

न्यायकि संयम और न्यायकि सक्रयिता का आशय और परभिाषा:

न्यायकि संयम (Judicial Restraint)

- न्यायकि संयम न्यायकि व्याख्या का एक सद्धिांत है जो न्यायाधीशों को स्वयं अपनी शक्तयिों के प्रयोग को सीमति करने के लयि प्रोत्साहति करता है।
    - यह ज़ोर देता है कि जब तक वधियिाँ स्पष्ट रूप से असंवैधानकि न हों, न्यायाधीशों को उन्हें नरिस्त करने से बचना चाहयि।
    - न्यायकि संयम रखने वाले न्यायाधीश पूर्व के न्यायाधीशों द्वारा स्थापति उदाहरणों और उनके नर्णियों का सम्मान करते हैं।
- 'न्यायकि संयम' शब्द की कई अलग-अलग परभिाषाएँ दी गई हैं। उनमें से कुछ नीचे सूचीबद्ध हैं:

ऑबर्न वशि्ववद्यिालय (Auburn University)

- ऑबर्न यूनविर्सटिी द्वारा प्रकाशति 'Glossary of Political Economy Terms' में न्यायकि संयम को इस दृष्टकिोण के रूप में परभिाषति कयिा गया है कि "उच्चतम न्यायालय (और अन्य नचिले न्यायालयों) को संवधिान और वधियिों में न्यायाधीशों को स्वयं के दर्शन या नीतगित प्राथमकिताओं को पढने के बजाय जब भी युक्तपिूर्वक संभव हो, वधि िकी व्याख्या करनी चाहयि ताकि संसद/कॉन्ग्रेस, राष्ट्रपति और राज्य सरकार जैसे अन्य सरकारी संस्थाओं द्वारा उनके संवैधानकि प्राधकिार के दायरे में लयि गए नीति-नर्णियों पर कसिी टपि्पणी या अटकलों से बचा जा सके। इस तरह के दृष्टकिोण में न्यायाधीशों के पास नीति नर्िमाताओं के रूप में कार्य करने का जनादेश नहीं होता और उन्हें संघ सरकार और राज्यों के नर्िवाचति 'राजनीतकि' अंगों द्वारा नीति नर्िमाण के मामले में लयि गए नर्णियों का तब तक सम्मान करना चाहयि जब तक ये नीति नर्िमाता अमेरकिी संवधिान और वभिन्नि राज्यों के संवधिानों द्वारा उन्हें प्रदत्त शक्तयिों के दायरे में बने रहते हैं।"
- न्यायकि संयम न्यायकि समीक्षा के अभ्यास के लयि एक प्रक्रयिात्मक या सारभूत दृष्टकिोण है। एक प्रक्रयिात्मक सद्धिांत के रूप में न्यायकि संयम न्यायाधीशों से वधिकि वषियों पर और वशिेष रूप से संवैधानकि वषियों पर नर्णियन से बचने का आग्रह रखता है, जब तक कि वरिोधी पक्षों के बीच कसिी ठोस ववािद के समाधान के लयि ऐसा नर्णियन आवश्यक न हो। सारभूत सद्धिांत के रूप में यह संवैधानकि प्रश्नों पर वचिाररत न्यायाधीशों से अपेक्षा रखता है कि वे नर्िवाचति संस्थाओं के वचिारों के प्रति पर्याप्त सम्मान रखें और उनके कृत्यों को केवल तभी अमान्य घोषति करें जब उनके द्वारा संवैधानकि सीमाओं का उल्लंघन कयिा गया हो।
- न्यायालयों को नए वचिारों या नीतगित प्राथमकिताओं को बढ़ावा देने के लयि न्यायकि समीक्षा का उपयोग करने से बचना चाहयि । संक्षेप में, न्यायालयों को वधि िकी व्याख्या करनी चाहयि और नीति-नर्िमाण में हस्तक्षेप नहीं करना चाहयि ।
- न्यायाधीशों को नम्निलखिति आधारों पर नर्णिय लेने का प्रयास करना चाहयि :
    - संवधिान नर्िमाताओं का मूल आशय।
    - पूर्व-दृष्टांत अर्थात् पूर्व के मामलों के नर्णिय।
    - न्यायालय को नीति नर्िमाण का कार्य दूसरों के लयि छोड़ देना चाहयि ।
    - वे अपने नर्णियों द्वारा नई नीतयिों की स्थापना करने की प्रवृत्ति से स्वयं को रोकते हैं।
    - वे दृढ़ता से संवधिान के प्रावधानों के आधार पर नर्णिय लेते हैं।

न्यायकि सक्रयिता

- 'न्यायकि सक्रयिता' शब्द का प्रयोग प्रायः 'न्यायकि संयम' के वपिरीत आशय में कयि जाता है। न्यायकि सक्रयिता एक बदलते समाज में न्यायकि दृष्टकिोण की एक गतशिील प्रक्रयि है। ऑर्थर स्लेसगिर जूनयिर ने जनवरी 1947 में फॉर्च्यून पत्रकिा में प्रकाशति 'द सुप्रीम कोर्ट: 1947' शीर्षक लेख में पहली बार "ज्यूडशियिल एक्टविज़िम" (Judicial Activism) शब्द का प्रयोग कयि था।
- ब्लैक्स लॉ डक्शिनरी (Black's Law Dictionary) के अनुसार, न्यायकि सक्रयिता एक 'न्यायकि दर्शन है जो न्यायाधीशों को पारंपरकि पूर्व-दृष्टांतों या नर्णियों से हटकर प्रगतशिील और नई सामाजकि नीतयिों के पक्ष में आगे बढ़ने को प्रेरति करती है।'
- हाल के वर्षों में न्यायालयों की न्यायकि सक्रयिता के माध्यम से वधिनिर्माण में नए आयाम ग्रहण कर लयि गए हैं। न्यायपालकिा ने सामाजकि संदर्भ में वधिकी व्याख्या करने की एक स्वस्थ प्रवृत्तको अपनाया है।
- न्यायकि सक्रयिता उन न्यायकि नर्णियों को प्रकट करती है जनि पर वद्यिमान वधिके बजाय व्यक्तगित या राजनीतकि वचिारों पर आधारति होने का संदेह है।
- न्यायाधीशों से अपेक्षा की जाती है कवि नर्णिय देते समय वधिकी व्याख्या संवधिान के अनुसार करें। लेकनि न्यायकि सक्रयितावादी न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत वधिकि मामलों पर वधिनिर्माण के लयि अपनी इच्छा का प्रयोग करते प्रतीत होते हैं।
- न्यायकि सक्रयिता का प्रश्न संवैधानकि व्याख्या, सांवधिकि संरचना और शक्तयिों के पृथक्करण से घनष्टि रूप से संबंधति है। इसे कभी-कभी न्यायकि संयम के वलिोम के रूप में भी उपयोग कयि जाता है।
- मामलों पर नर्णिय लेते समय न्यायाधीशों को यह सुनश्चिति करना चाहयि कवि धिकी व्याख्या और उसका प्रवर्तन समकालीन परस्थितियिों व मूल्यों में हो रहे परविर्तनों के आधार पर कयि जाए। चूँकसिमाज में परविर्तन होता रहता है और उसकी मान्यताएँ व मूल्य भी बदलते रहते हैं, न्यायालयों के नर्णियों में उनका प्रतबिबिन होना चाहयि।
- न्यायकि सक्रयिता के वचिार के अनुसार न्यायाधीशों को अन्यायपूर्ण कृत्यों के प्रतकिार के लयि अपनी शक्तयिों का उपयोग करना चाहयि वशिेष रूप से जब सरकार के अन्य अंग इस दशिा में प्रयास नहीं करते।
    - संक्षेप में, न्यायालयों को नागरकि अधकिारों, व्यक्तगित अधकिारों की सुरक्षा, राजनीतकि भेदभाव और सार्वजनकि नैतकिता जैसे वषियों पर सामाजकि नीतको आकार देने में सक्रयि भूमकिा नभिानी चाहयि।
    - **मेनका गांधी मामले** में उच्चतम न्यायालय का नर्णिय, भारतीय संवधिान के अनुच्छेद 21 से संबंधति नर्णिय आदन्यायकि सक्रयिता के उदाहरण हैं।

न्यायकि संयम की प्रवृत्तयिाँ

- **डवीजनल मैनेजर, अरावली गोल्फ कोर्स बनाम चंदर हास** मामले (2008) में उच्चतम न्यायालय ने भारतीय संवधिान में नहिति शक्तयिों के पृथक्करण पर वस्तिार से चर्चा की। भारत का संवधिान न्यायपालकिा के सुपर लेजस्लिेचर (Super Legislature) बनने या अन्य दोनों अंगों की वफिलता की स्थतिमिें एक वकिल्प बनने की परकिल्पना नहीं करता। इस प्रकार न्यायपालकिा को अपनी सीमाएँ नर्धिारति करने की आवश्यकता है।
- न्यायकि संयम का एक उदाहरण **राजस्थान राज्य बनाम भारत संघ** का मामला है जसिमें न्यायालय ने इस आधार पर **याचकिा को खारजि कर दयि कइिसमें एक राजनीतकि प्रश्न शामलि था और इसलयि न्यायालय इस मामले में हस्तक्षेप करेगा।**
- एस.आर. बोम्मई बनाम भारत संघ मामले में न्यायाधीशों ने कहा कि कुछ स्थतियिाँ ऐसी होती हैं जहाँ राजनीतकि तत्त्व अभभिावी होते है और वहाँ न्यायकि समीक्षा संभव नहीं होती।
- अनुच्छेद 356 के अंतर्गत शक्तयिों के प्रयोग को एक राजनीतकि प्रश्न माना गया है और इसलयि न्यायपालकिा को इसमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहयि। न्यायमूर्तअिहमदी ने कहा कराजनीतकि नर्णियों के परीक्षण के लयि न्यायकि रूप से प्रबंधनीय मानदंडों को वकिसति करना कठनि है और यदन्यायालय ऐसा करते हैं तो यह राजनीतकि क्षेत्र में प्रवेश करना और राजनीतकि ववािक को प्रश्नगत करना होगा, जनिसे न्यायालय को बचना चाहयि।
- अलमत्रिा एच. पटेल बनाम भारत संघ मामले में दल्लिी में स्वच्छता के मुद्दे पर नगर नगिम को नर्दिेश देने के प्रश्न पर उच्चतम न्यायालय ने कहा कि यह न्यायालय का काम नहीं है कवि ह नगर नगिम को यह नर्दिेश दे कवि ह अपने बुनयिादी कार्य कैसे करे और उसकी कठनिाइयों को कैसे दूर करे। न्यायालय अधकिारयिों को केवल यह नर्दिेश दे सकता है कवि वधिद्वारा सौंपे गए कार्यों के अनुरूप अपने कर्त्तव्यों का नर्विहन करें।
- भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश ए.एस. आनंद ने एक सार्वजनकि व्याख्यान में कहा कि न्यायकि सक्रयिता 'न्यायकि दुस्साहस' (Judicial Adventurism) न बन जाए, इसके लयि आवश्यक है कि न्यायाधीश अपने न्यायकि कार्यों के नर्विहन में सतर्कता व आत्म-अनुशासन का पालन करें। न्यायकि सक्रयिता का सबसे बड़ा दुष्परणिाम इसकी अप्रत्याशतिता है। यदि न्यायाधीश आत्म-संयम का अभ्यास नहीं करेंगे तो प्रत्येक न्यायाधीश स्वयं में ही एक कानून बन जाएंगे और वे अपनी व्यक्तगित इच्छाओं पर नर्दिेश जारी करने लगेंगे, जसिसे अराजकता पैदा होगी।
- भारत का उच्चतम न्यायालय अपने प्रारंभकि वर्षों में रूढ़वािदी बना रहा लेकनि बाद के वर्षों में न्यायमूर्तगिजेन्द्रगडकर, कृष्णा अय्यर, पी.एन. भगवती आदि, जन्होंने भारतीय संवधिान के अनुच्छेद 14, 19 और 21 की व्याख्या के बहाने न्यायकि नर्णियों द्वारा कई वधिकि मानदंडों का सृजन कयि, के सामाजकि दर्शन के माध्यम से न्यायकि सक्रयिता का उभार हुआ।
    - भारतीय संवधिान का भाग III वाक्-स्वतंत्रता, दैहकि स्वतंत्रता, समानता, धार्मकि स्वतंत्रता जैसे मूल अधकिारों का उपबंध करता है जो प्रवर्तनीय हैं।
    - दूसरी ओर भाग IV, जसि 'राज्य के नीतनिदिशक तत्व' कहा जाता है, में कार्य, शक्षिा, आजीवकिा नर्विाह और स्वास्थ्य के अधकिार जैसे सामाजकि-आर्थकि आदर्श शामलि हैं जो प्रवर्तनीय नहीं हैं लेकनि जनिकी प्राप्तके लयि राज्य को प्रयास करने के लयि नर्दिेशति कयि गया है।
    - हालाँकअिनुच्छेद 37 में कहा गया है कनिदिशक तत्त्व अप्रवर्तनीय हैं लेकनि भारत के उच्चतम न्यायालय ने इनमें से कुछ को मूल अधकिारों के रूप में देखते हुए (जैसे उन्नीकृष्णन मामले में शक्षिा के अधकिार को अनुच्छेद 21 के साथ पढ़ा गया) प्रवर्तति कयि है।
- भारतीय संवधिान के अनुच्छेद 21 से संबंधति मामलों में भारतीय उच्चतम न्यायालय के नर्णियों की एक सक्रयि भूमकिा रही है। इसलयि यहाँ इसका पृथक ववेचन कयि जा रहा है।

अनुच्छेद 21 और न्यायकि सक्रयिता

- अनुच्छेद 21 में कहा गया है- 'किसी व्यक्ति को उसके प्राण या दैहिक स्वतंत्रता से वंचित किया जाएगा, अन्यथा नहीं।'
- ए.के. गोपालन बनाम मद्रास राज्य मामले में भारतीय उच्चतम न्यायालय ने इस तर्क को खारिज कर दिया कि किसी व्यक्ति को उसके प्राण या दैहिक स्वतंत्रता से वंचित करने के लिये न केवल विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया का पालन किया जाना चाहिये बल्कि यह प्रक्रिया निष्पक्ष, तार्किक और न्यायसंगत भी होनी चाहिये। किसी अन्य दृष्टिकोण को अपनाने पर अनुच्छेद 21 में सम्यक प्रक्रिया (Due Process) को शामिल करना होगा जिसे संविधान के निर्माण के समय इसमें शामिल नहीं किया गया था।
- हालाँकि बाद में मेनका गांधी बनाम भारत संघ मामले में न्यायिक व्याख्या द्वारा अनुच्छेद 21 में सम्यक प्रक्रिया की इस आवश्यकता को शामिल कर लिया गया। इस प्रकार, सम्यक प्रक्रिया का उपखंड, जिसे संविधान निर्माताओं द्वारा सतर्कतापूर्वक और जान-बूझकर छोड़ दिया गया था, उसे भारतीय उच्चतम न्यायालय की न्यायिक सक्रियता के माध्यम से संविधान में शामिल कर दिया गया।
- भारत के उच्चतम न्यायालय द्वारा न्यायिक सक्रियता के एक और वृहत दौर का आरंभ तब हुआ जब इसने अनुच्छेद 21 में शामिल 'जीवन' (Life) शब्द की व्याख्या केवल जीवित रहने या जैविक अस्तित्व तक सीमित रूप से करने की बजाय गरिमापूर्ण मानव जीवन के रूप में की।
- फ्रांसिस कोर्ली बनाम केंद्रशासित प्रदेश दिल्ली मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि जीवन का अधिकार केवल पशुवत अस्तित्व तक सीमित नहीं है। इसका अर्थ शारीरिक उत्तरजीविता (Physical Survival) से बढ़कर है।
- न्यायालय ने कहा कि जीवन के अधिकार में मानवीय गरिमा के साथ जीने का अधिकार शामिल है। मानवीय गरिमा के लिये बुनियादी आवश्यकताओं का पूरा होना सबसे महत्त्वपूर्ण है। जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं में पर्याप्त पोषण, वस्त्र, आवास, पढाई-लिखाई एवं विभिन्न तरीकों से स्वयं को अभिव्यक्त करने की सुविधा, निर्बाध विचरण और लोगों के साथ घुलने-मिलने की स्वतंत्रता भी शामिल है।
- आर. राजगोपाल बनाम तमिलनाडु राज्य मामले में एक नए अधिकार 'निजता के अधिकार' (Right to Privacy) को अनुच्छेद 21 में शामिल माना गया। न्यायालय ने कहा कि किसी नागरिक को अन्य विषयों के साथ स्वयं की, परिवार की, विवाह, संतानोत्पत्ति, मातृत्व, गर्भधारण, शिक्षा आदि के संबंध में निजता की रक्षा का अधिकार प्राप्त है।
- उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय भी दिया कि अनुच्छेद 21 के तहत गारंटीकृत जीवन के अधिकार में आजीविका का अधिकार भी शामिल है। कपिला हिंगोरानी बनाम भारत संघ मामले में भोजन के अधिकार को जीवन के अधिकार के अंग के रूप में चिह्नित किया गया जहाँ स्पष्ट रूप से कहा गया कि यह राज्य का कर्त्तव्य है कि उन परिस्थितियों में आजीविका के पर्याप्त साधन उपलब्ध कराए जहाँ लोग भोजन का खर्च उठाने में असमर्थ हैं।
- न्यायालय ने यह भी माना है कि सुरक्षित पेयजल का अधिकार मूल अधिकारों में से एक है जो जीवन के अधिकार में शामिल है। निष्पक्ष सुनवाई (Fair Trial) का अधिकार, स्वास्थ्य एवं चिकित्सा देखभाल का अधिकार, जलकुंडों, तालाब, जंगल आदि का संरक्षण (जो गुणवत्तापूर्ण जीवन सुनिश्चित करते हैं), पारिवारिक पेंशन का अधिकार, विधिक सहायता व विधिक परामर्शदाता पाने का अधिकार, यौन उत्पीड़न के विरुद्ध सुरक्षा का अधिकार, दुर्घटनाओं के मामले में चिकित्सा सहायता का अधिकार, एकांत कारावास के विरुद्ध सुरक्षा का अधिकार, हथकड़ी और ज़ंजीर से बंदी बनाए जाने के विरुद्ध सुरक्षा का अधिकार, त्वरित सुनवाई का अधिकार, पुलिस अत्याचार, यातना और हिरासत में हिंसा के विरुद्ध सुरक्षा का अधिकार, कारावास नियमों के अनुरूप साक्षात्कार देने और आगंतुकों से मिल सकने का अधिकार, न्यूनतम मजदूरी का अधिकार आदि को अनुच्छेद 21 में अभिव्यक्त 'जीवन के अधिकार' में शामिल करने का निर्णय लिया गया।
- हाल ही में उच्चतम न्यायालय ने सेंटर फॉर एन्वायरनमेंट लॉ बनाम भारत संघ मामले में पर्यावरण संरक्षण को अनुच्छेद 21 का अंग मानते हुए एशियाई शेरों के लिये एक दूसरा पर्यावास उपलब्ध कराने का निर्देश जारी किया। इसी प्रकार ऐसे ही एक मामले में उच्चतम न्यायालय ने सोने के अधिकार (Right to Sleep) को अनुच्छेद 21 का अंग बताया। अजय बंसल बनाम भारत संघ वाद में उच्चतम न्यायालय ने उत्तराखंड में फँसे व्यक्तियों के लिये हेलीकॉप्टर उपलब्ध कराने का निर्देश जारी किया।
- इस प्रकार हम देखते हैं कि भारत के उच्चतम न्यायालय की न्यायिक सक्रियता के कारण अनुच्छेद 21 से कई अधिकारों की उत्पत्ति हुई है। हालाँकि इनमें से कई आदेशों को लेकर व्यापक आशंकाएँ भी व्यक्त की गई हैं। अभी यह स्थिति स्पष्ट नहीं है कि न्यायालय के आदेशों से उत्पन्न होते अधिकारों की संख्या पर कोई सीमा आरोपित होगी या नहीं।
- भगवान दास बनाम दिल्ली राज्य मामले के निर्णय में उच्चतम न्यायालय ने 'ऑनर किलिंग' (Honour Killing) (अर्थात् जाति या धर्म या गोत्र से बाहर या स्वग्राम में विवाह करने वाले युवक-युवतियों की हत्या) के लिये मृत्युदंड को अनिवार्य बना दिया और इस प्रकार माता-पिता या उनकी जाति के प्रति 'तिरिस्कार' का भाव प्रकट किया।
- न्यायिक सक्रियता का एक नवीनतम मामला अरुणा रामचंद्र शानबाग बनाम भारत संघ एवं अन्य का है। अरुणा शानबाग मुंबई के एक अस्पताल में कार्यरत नर्स थी जिस पर वर्ष 1973 में यौन हमला किया गया था और वह तब से कोमा में अथवा निष्क्रिय अवस्था में पड़ी है। अरुणा के इसी अवस्था में बने रहने के 37 वर्षों बाद वर्ष 2011 में उसकी मित्र होने का दावा करने वाली एक सामाजिक कार्यकर्त्ता ने उच्चतम न्यायालय में याचिका देकर उसके लिये 'इच्छा मृत्यु' (Euthansia) की मांग की, किंतु इस ऐतिहासिक निर्णय में न्यायालय ने केवल निष्क्रिय इच्छा मृत्यु (Passive Euthanasia) की अनुमति दी अर्थात् स्थायी रूप से कोमा में पड़े व्यक्ति का लाइफ सपोर्ट हटाया जा सकता है जिसका अनुमोदन उच्च न्यायालय से प्राप्त करना होगा।

न्यायिक सक्रियता बनाम न्यायिक संयम

- न्यायिक सक्रियता (शिथिल संरचनावादी) और न्यायिक संयम (कठोर संरचनावादी) के बीच का अंतर संविधान की व्याख्या करने के तरीके पर निर्भर है। कोई कठोर संरचनावादी न्यायाधीश संविधान की शाब्दिक व्याख्या करते हुए अथवा संविधान निर्माताओं की मूल मंशा का ध्यान रखते हुए मामलों का निर्णयन कर सकता है, जबकि कोई शिथिल संरचनावादी अथवा न्यायिक सक्रियतावादी न्यायाधीश संविधान के निर्माण से लेकर वर्तमान समय तक आए परिवर्तनों का भी ध्यान रखते हुए वृहत तरीके से मामलों का निर्णयन कर सकता है।
- न्यायिक सक्रियता और न्यायिक संयम दो विपरीत दृष्टिकोण हैं। न्यायिक सक्रियता और न्यायिक संयम किसी देश की न्यायिक प्रणाली से संबंधित हैं और वे सरकार या किसी भी संवैधानिक निकाय की शक्तियों के मनमाने उपयोग के विरुद्ध नियंत्रण का कार्य करते हैं।
  1. न्यायिक सक्रियता समकालीन मूल्यों और परिदृश्यों की पैरोकारी के लिये संविधान की व्याख्या है। दूसरी ओर, न्यायिक संयम किसी विधि को निरस्त करने की न्यायाधीशों की शक्तियों को सीमित करता है।
  2. न्यायिक संयम में न्यायालय संसद और राज्य विधानमंडलों के सभी विधानों की पुष्टि करता है यदि वे देश के संविधान का उल्लंघन नहीं कर रहे हैं।

न्यायकि संयम में न्यायालय सामान्यतः संसद या कसिी अन्य संवैधानकि नकिाय द्वारा प्रस्तुत संवधिान की व्याख्याओं का सम्मान करते हैं।
3. न्यायकि संयम और न्यायकि सक्रयिता के मामले में न्यायाधीशों को कसिी अन्यायपूर्ण कृत्य में सुधार के लयि अपनी शक्तयिों के उपयोग की आवश्यकता होती है, वशिषकर जब अन्य संवैधानकि नकिाय कार्य नहीं कर रहे हों। इसका आशय यह है कि व्यक्तगित अधकिारों की सुरक्षा, नागरकि अधकिारों, सार्वजनकि नैतकिता और राजनीतकि भेदभाव जैसे वषियों पर सामाजकि नीतयिों को आकार देने में न्यायकि सक्रयिता की अहम भूमकिा है।
4. न्यायकि सक्रयिता और न्यायकि संयम के लक्ष्य अलग-अलग हैं। न्यायकि संयम सरकार के तीनों अंगों- न्यायपालकिा, कार्यपालकिा और वधिायकिा के बीच संतुलन बनाए रखने में सहायता करता है। न्यायकि संयम के मामले में न्यायाधीश और न्यायालय प्रवर्तति वधियिों को संशोधति करने के बजाय उनकी समीक्षा को प्रोत्साहति करते हैं।
5. न्यायकि सक्रयिता के लक्ष्यों पर वचिार करें तो यह कुछ अधनियिमों या नर्णियों को नरिस्त करने की शक्ति प्रदान करता है। उदाहरण के लयि उच्चतम न्यायालय या अपीलीय न्यायालय पूर्व के नर्णियों को पलट सकते हैं यदि वे दोषपूर्ण हों। यह न्यायकि प्रणाली नयिंत्रण और संतुलन का भी कार्य करती है और सरकार के तीनों अंगों- न्यायपालकिा, कार्यपालकिा और वधिायकिा को असीमति शक्तशिाली बनने से रोकती है।
6. न्यायकि संयम में न्यायाधीश संवधिान नर्माताओं की मूल मंशा पर वचिार करते हैं जबकि न्यायकि सक्रयिता में न्यायाधीश संवधिान नर्माताओं की मूल मंशा के परे जाकर वचिार करते हैं (क्योंकि अंततः संवधिान नर्माता भी मनुष्य थे और उनसे भी भूल हो सकती है)।
7. न्यायकि संयम का दृष्टकिोण रखने वाले न्यायाधीश अपने नर्णियन में वधि नर्माताओं (Legislatures) के उद्देश्यों व अधनियिम की भाषा पर वचिार करते हैं और संवधिान की मूल भाषा में परविर्तन का अवसर केवल संवधिान संशोधन के आधार पर देते हैं।

नष्किर्ष

- जब न्यायाधीश यह मानने लगते हैं कि वे समाज की सभी समस्याओं को हल कर सकते हैं और इस दृष्टकिोण से वधिायकिा व कार्यपालकिा के कार्य भी स्वयं करने लगते हैं (क्योंकि उन्हें लगता है कि वधिायकिा व कार्यपालकिा अपने कर्त्तव्य नर्वहन में वफिल रहे हैं) तब वभिन्नि समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।
- नश्चिय ही न्यायाधीश कुछ चरम मामलों में हस्तक्षेप कर सकते हैं, लेकनि समाज की सभी प्रमुख समस्याओं के समाधान के लयि उनका आगे आना अनुपयुक्त है क्योंकि इसके लयि न तो उनके पास वशिषज्ञता होती है और न ही संसाधन होते हैं।
- इसके साथ ही जब न्यायपालकिा वधिायकिा या कार्यपालकिा के कार्य क्षेत्र का अतक्रिमण करने लगती है तो परहिार्य रूप से इस पर राजनेताओं एवं अन्य की तीखी प्रतक्रियिा आती है।

PDF Refernece URL: https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/judicial-activism-and-judicial-restraint